सहभागी शासन और विकास: महराजगंज ज़िले की फरेंदा तहसील में पंचायती राज संस्थाओं की गतिशीलता

शोधार्थी पवन कुमार
राजनीति विज्ञान विभाग, बी० आर० डी० पी० जी० कालेज देवरिया

सारांश

सहभागी शासन का मतलब है ऐसा शासन जिसमें लोगों की सीधी भागीदारी हो, निर्णय पारदर्शी हों और जिम्मेदारी तय हो। यह लोकतंत्र की एक अहम पहचान बन गया है। भारत में इसे 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के माध्यम से लागू किया गया, जिसके तहत पंचायती राज संस्थाओं (PRIs) को शासन की तीसरी इकाई बनाया गया ताकि ग्रामीण स्तर पर लोग खुद अपने विकास से जुड़े निर्णय ले सकें। यह शोध पत्र उत्तर प्रदेश के महाराजगंज जिले की फरेंदा तहसील में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से सहभागी शासन और ग्रामीण विकास की स्थिति को समझने का प्रयास करता है। फरेंदा तहसील एक ऐसा इलाका है जहाँ लोग मुख्य रूप से खेती पर निर्भर हैं और सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ व विकास से जुड़ी कई चुनौतियाँ मौजूद हैं।

इस अध्ययन में मिश्रित शोध विधि (mixed-method) का प्रयोग किया गया है — जिसमें क्षेत्रीय साक्षात्कार, ग्राम सभाओं के अवलोकन और सरकारी दस्तावेजों के आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन यह जानने की कोशिश करता है कि पंचायतें कैसे काम कर रही हैं, लोग किस हद तक निर्णय प्रक्रिया में शामिल होते हैं, और विकास योजनाएँ किस तरह लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भावना को दर्शाती हैं। अध्ययन के परिणाम बताते हैं कि फरेंदा की पंचायतों ने राजनीतिक भागीदारी, जागरूकता, और सेवा वितरण में सुधार किया है, लेकिन अभी भी कई सीमाएँ हैं। नौकरशाही दखल, सीमित आर्थिक स्वतंत्रता, महिलाओं व पिछड़े वर्गों की सीमित भूमिका, और निर्वाचित प्रतिनिधियों की प्रशिक्षण कमी जैसी समस्याएँ विकास में बाधा बनती हैं। फिर भी, पंचायती राज ने गाँवों में लोगों की भागीदारी और सामाजिक एकता की भावना को मज़बूत किया है। यह अध्ययन निष्कर्ष निकालता है कि अगर संस्थागत सुधार, प्रतिनिधियों का प्रशिक्षण, वित्तीय सशक्तिकरण, और डिजिटल पारदर्शिता को बढ़ावा दिया जाए, तो पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण विकास और लोकतंत्र की जड़ों को और अधिक मजबूत बना सकती हैं।

बीज शब्द :

सहभागी शासन, पंचायती राज संस्थाएँ, विकेंद्रीकरण, ग्रामीण विकास, फरेंदा तहसील, महाराजगंज जिला, उत्तर प्रदेश।

प्रस्तावना:

लोकतंत्र तब ही अपने असली रूप में दिखाई देता है जब आम लोग उन निर्णयों और योजनाओं में सीधे भाग लेते हैं जो उनके जीवन को प्रभावित करती हैं। भारत में इस सोच को पंचायती राज प्रणाली के रूप में साकार किया गया, जिसका उद्देश्य था – गाँव के स्तर पर लोगों को शासन में भागीदार बनाना और विकास की प्रक्रिया को नीचे तक पहुँचाना। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं (पीआरआई) को संवैधानिक मान्यता दी गई। इससे ग्राम पंचायतों, क्षेत्र पंचायतों और जिला पंचायतों को यह अधिकार मिला कि वे अपने क्षेत्र में विकास की योजना बना सकें और उसे लागू भी करें।

उत्तर प्रदेश के महाराजगंज जिले की फरेंदा तहसील एक प्रमुख ग्रामीण क्षेत्र है, जहाँ कृषि मुख्य आजीविका का साधन है। लेकिन यहाँ सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ, कम साक्षरता दर और बुनियादी सुविधाओं की कमी जैसी समस्याएँ भी हैं। इसलिए यह क्षेत्र यह समझने के लिए उपयुक्त उदाहरण है कि पंचायती राज संस्थाएँ वास्तव में ग्रामीण विकास और जनसहभागिता को किस हद तक बढ़ावा देती हैं। यह अध्ययन इस बात पर केंद्रित है कि फरेंदा तहसील की पंचायतें विकास की योजना, क्रियान्वयन और जनभागीदारी के स्तर पर कितनी प्रभावी हैं। इस शोध का महत्व इस तथ्य में है कि अगर विकेंद्रीकरण (Decentralization) को सही तरीके से लागू किया जाए, तो यह न केवल शासन की कमियों को दूर कर सकता है, बल्कि नागरिकों की भागीदारी को भी मज़बूत बनाता है। इससे स्थानीय शासन को सतत (Sustainable) और समावेशी (Inclusive) विकास के लक्ष्यों से जोड़ा जा सकता है।

1.संकल्पनात्मक ढाँचा: सहभागी शासन और पंचायती राज

पंचायती राज व्यवस्था में सहभागी शासन (Participatory Governance) का विचार इस सोच पर आधारित है कि लोकतंत्र तभी मजबूत बनता है जब लोग खुद अपने विकास और निर्णय लेने की प्रक्रिया में सीधे भाग लेते हैं। इसका मतलब है कि शासन सिर्फ सरकार तक सीमित न रहकर आम नागरिकों की भागीदारी से चलता है। सहभागी शासन का मुख्य उद्देश्य यह है कि लोगों को शासन में सीधा हिस्सा दिया जाए ताकि फैसले उनके जीवन और जरूरतों के अनुरूप हों। यह पारंपरिक "ऊपर से नीचे" वाले प्रशासनिक ढाँचे से अलग है और "नीचे से ऊपर" वाले दृष्टिकोण को अपनाता है। इसमें नागरिक सिर्फ योजनाओं के लाभार्थी नहीं, बल्कि योजना बनाने और लागू करने की प्रक्रिया के सक्रिय सदस्य बनते हैं। इससे शासन में पारदर्शिता (Transparency), जवाबदेही (Accountability) और विश्वसनीयता बढ़ती है। भारत में इस विचार को पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से लागू किया गया है, जिसे 73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) के द्वारा संवैधानिक दर्जा मिला। इस संशोधन से स्थानीय स्वशासन की तीन-स्तरीय प्रणाली स्थापित हुई—ग्राम पंचायत (गाँव स्तर), पंचायत समिति (ब्लॉक स्तर), जिला परिषद (जिला स्तर)

यह व्यवस्था इस सिद्धांत पर आधारित है कि फैसले वही लोग लें जिन पर उनका सीधा असर पड़ता है। पंचायती राज में ग्राम सभा सबसे अहम संस्था है। यह गाँव के लोगों को स्थानीय समस्याओं पर चर्चा करने, विकास योजनाओं को मंजूरी देने और सरकारी खर्चों की निगरानी करने का अधिकार देती है। इस तरह ग्राम सभा लोगों को निर्णय प्रक्रिया में सीधा भागीदार बनाती है, जिससे शासन अधिक लोकतांत्रिक और प्रभावी बनता है। सहभागी शासन और पंचायती राज का संबंध लोकतांत्रिक गहराई (Democratic Deepening) और सशक्तिकरण (Empowerment) के विचारों से भी जुड़ा है। इसका मतलब है कि असली विकास तभी संभव है जब स्थानीय समुदायों को अपनी बात कहने और अपने फैसले खुद लेने की शक्ति मिले। इसलिए, पंचायती राज संस्थाओं (पीआरआई) को "जनता के लोकतंत्र के प्रतिनिधि" के रूप में देखा जाता है — जो संसाधनों का समान बँटवारा, महिलाओं और कमजोर वर्गों की भागीदारी, और स्थानीय जरूरतों के अनुसार योजनाएँ बनाने में मदद करते हैं।

आज के समय में सहभागी शासन और पंचायती राज को सुशासन (Good Governance) और सतत विकास लक्ष्यों (SDG) की प्राप्ति के लिए जरूरी माना जाता है। यह शासन की उस दिशा को दर्शाता है जहाँ सरकार और जनता मिलकर विकास की राह तय करते हैं — परामर्श, साझेदारी और सामूहिक जिम्मेदारी के आधार पर। सहभागी शासन और पंचायती राज का ढाँचा पाँच मुख्य स्तंभों पर टिका है —

1. लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण – स्थानीय स्तर पर निर्णय और अधिकार का हस्तांतरण।
2. नागरिक भागीदारी – योजना, क्रियान्वयन और निगरानी में लोगों की सक्रिय भूमिका।
3. जवाबदेही और पारदर्शिता – शासन की निगरानी और सामाजिक लेखा परीक्षा की व्यवस्था।
4. सशक्तिकरण और समावेशन – समाज के कमजोर वर्गों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल करना।
5. सहयोगात्मक विकास – राज्य और नागरिकों की साझेदारी से स्थानीय प्रगति सुनिश्चित करना।

इन सभी सिद्धांतों से मिलकर पंचायती राज एक ऐसा संस्थागत ढाँचा बनाता है जो भारत के लोकतंत्र की आत्मा — *"जनता को शक्ति"* — को साकार करता है।

2.फरेन्दा में पंचायती राज संस्थाओं की संस्थागत और कार्यात्मक गतिशीलता:

महराजगंज जिले की फरेन्दा तहसील में पंचायती राज संस्थाएँ (पीआरआई) तीन स्तरों पर आधारित संवैधानिक ढाँचे के तहत काम करती हैं। यह व्यवस्था गाँव के स्तर पर लोकतंत्र को मज़बूत करने और लोगों की सीधी भागीदारी के साथ विकास को बढ़ावा देने के लिए बनाई गई है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) ने इस प्रणाली को कानूनी रूप दिया ताकि ग्रामीण भारत में विकेन्द्रीकृत शासन (decentralized governance) को लागू किया जा सके।

संस्थागत संरचना: फरेन्दा की पंचायती राज व्यवस्था तीन स्तरों पर चलती है —ग्राम पंचायत (ग्राम स्तर), क्षेत्र पंचायत (ब्लॉक स्तर) और जिला पंचायत (जिला स्तर)।
हर स्तर की अपनी अलग ज़िम्मेदारियाँ और अधिकार क्षेत्र हैं।

(क) ग्राम पंचायत – ग्राम स्तर ग्राम पंचायत सबसे निचला लेकिन सबसे महत्वपूर्ण स्तर है। यह गाँव के लोगों के हित में कई योजनाएँ लागू करती है, जैसे – स्वच्छ भारत मिशन, मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) और जल जीवन मिशन। यह पंचायत गाँव में सफाई, पानी, सड़क, नाली, और सामुदायिक विकास जैसी बुनियादी ज़रूरतों की देखभाल करती है। ग्राम प्रधान गाँव की बैठकों (ग्राम सभा) का आयोजन करता है, विकास कार्यों की निगरानी करता है और सरकारी विभागों से समन्वय बनाता है।

(ख) क्षेत्र पंचायत – ब्लॉक स्तर यह पंचायत ब्लॉक के अंतर्गत आने वाली कई ग्राम पंचायतों के बीच विकास योजनाओं का समन्वय करती है। यह धनराशि के वितरण, परियोजनाओं की प्रगति पर नज़र रखने और गाँवों के बीच असमानताओं को कम करने में भूमिका निभाती है। इसे पंचायत समिति भी कहा जाता है और यह ग्राम पंचायत और जिला पंचायत के बीच की कड़ी के रूप में काम करती है।

(ग) **जिला पंचायत – जिला स्तर** जिला पंचायत जिले के विकास की समग्र योजना बनाती है। यह गाँव और ब्लॉक स्तर से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर जिला विकास योजना (DDP) तैयार करती है, ताकि सभी स्तरों पर योजनाओं में सामंजस्य बना रहे। साथ ही, यह बजट आवंटन, विभिन्न विभागों के बीच तालमेल और चल रही योजनाओं की समीक्षा करती है। इस तरह यह तीनों स्तर मिलकर नीचे से ऊपर तक विकास की योजना (bottom-up planning) सुनिश्चित करते हैं।
हालाँकि, फरेन्दा में इस व्यवस्था की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि प्रशासन कितना कुशल है, पंचायत सदस्यों की क्षमता कितनी है और आम जनता इसमें कितनी सक्रियता से भाग लेती है।

3.संस्थागत कार्यप्रणाली

फरेन्दा के क्षेत्रीय अध्ययनों से पता चलता है कि पंचायतों की कार्यप्रणाली में सकारात्मक पहलू भी हैं और कई सीमाएँ भी। ग्राम पंचायतें सरकार की योजनाओं को लागू करने में सक्रिय हैं, परंतु कई बार नौकरशाही देरी, तकनीकी कमी और धन की अनियमितता जैसी समस्याएँ आ जाती हैं। उदाहरण के लिए —

स्वच्छ भारत मिशन से गाँवों में सफाई की स्थिति बेहतर हुई है, लेकिन लोगों की आदतों में स्थायी बदलाव अभी भी चुनौती है।

मनरेगा ने रोज़गार बढ़ाया है, पर धनराशि देर से मिलने के कारण कार्य रुक जाते हैं।

प्रधानमंत्री आवास योजना और जल जीवन मिशन से आवास और पेयजल की सुविधा बढ़ी है, लेकिन स्थानीय स्तर पर तकनीकी जानकारी की कमी के कारण काम की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

इसके अलावा, कई बार उच्च स्तर के अधिकारी (जैसे ब्लॉक या जिला प्रशासन) धनराशि और परियोजनाओं पर अंतिम निर्णय लेते हैं, जिससे स्थानीय स्वायत्तता घट जाती है।
पंचायत सदस्यों को पर्याप्त प्रशिक्षण, डिजिटल साधन और प्रशासनिक अनुभव की कमी होती है, जिससे वे विकास कार्यों की सही निगरानी नहीं कर पाते। इसलिए कहा जा सकता है कि फरेन्दा में पंचायतें लोकतांत्रिक शासन का पालन तो करती हैं, लेकिन स्वायत्तता (independence) और निर्भरता (dependence) के बीच फँसी हुई हैं — यानी कानूनी अधिकार तो हैं, पर व्यावहारिक रूप से सीमाएँ बहुत हैं।

ग्राम सभा की भागीदारी ग्राम सभा लोकतंत्र की सबसे अहम इकाई है, जहाँ गाँव के लोग सीधे शासन से जुड़ते हैं। इसका उद्देश्य है कि हर नागरिक अपनी राय दे सके और निर्णय सामूहिक रूप से लिए जाएँ। लेकिन फरेन्दा की स्थिति बताती है कि ग्राम सभा की बैठकें कमज़ोर भागीदारी का सामना कर रही हैं। लगभग 35% लोग ही नियमित रूप से ग्राम सभा की बैठकों में शामिल होते हैं। महिलाओं, दलितों और गरीब तबकों की उपस्थिति बहुत कम होती है, क्योंकि समाज में अभी भी जातीय और लैंगिक असमानताएँ मौजूद हैं। कई बार ग्राम सभा की बैठकों में निर्णय पहले से तय कर लिए जाते हैं, जिससे आम नागरिकों की राय का प्रभाव कम हो जाता है। लोगों में पंचायत और ग्राम सभा की भूमिका के प्रति जागरूकता की कमी भी भागीदारी को सीमित करती है। ग्राम सभा को प्रभावी बनाने के लिए ज़रूरी है कि – लोगों में जागरूकता बढ़ाई जाए, महिलाओं और कमजोर वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए, और लिए गए निर्णयों को पारदर्शी व ज़िम्मेदार बनाया जाए।

7. सहभागी विकास के परिणाम :

प्रशासनिक, आर्थिक और संरचनात्मक सीमाओं के बावजूद, महाराजगंज जिले की फरेंदा तहसील में पंचायती राज व्यवस्था ने सहभागी विकास को बढ़ावा देने में एक अहम भूमिका निभाई है। अध्ययन से पता चलता है कि ग्राम पंचायतों के माध्यम से विकेन्द्रीकृत शासन ने गाँवों में कई तरह के सकारात्मक बदलाव लाए हैं, जो ग्रामीण लोगों के सशक्तिकरण और सतत विकास की दिशा में महत्वपूर्ण हैं।

बुनियादी ढाँचा विकास : फरेंदा में पंचायती राज के ज़रिए गाँवों में सड़कें, नालियाँ, सामुदायिक भवन, हैंडपंप और छोटे पुल जैसी सुविधाएँ बनाई गई हैं। इन कार्यों से गाँवों में आवागमन आसान हुआ है, किसान अपनी फसलों को बाजार तक बेहतर तरीके से पहुँचा पा रहे हैं और गाँवों के बीच आपसी संबंध भी मज़बूत हुए हैं। इन निर्माण कार्यों में स्थानीय मजदूरों और संसाधनों का उपयोग किया गया, जिससे लोगों में अपनापन और जिम्मेदारी की भावना बढ़ी है।

सामाजिक कल्याण और समावेशी विकास: पंचायती राज संस्थाएँ अब गाँवों तक सरकारी योजनाओं को पहुँचाने का मुख्य माध्यम बन गई हैं। जैसे – प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) से गरीबों को घर,राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (NSAP) से वृद्धावस्था और विधवा पेंशन,
और स्वच्छ भारत मिशन (SBM) से स्वच्छता को बढ़ावा मिला है। हालाँकि, धन की कमी, प्रशासनिक देरी और स्थानीय प्रभावशाली लोगों के दबाव जैसी समस्याएँ भी सामने आती हैं। फिर भी, अब लाभार्थियों की सही पहचान होने लगी है और योजनाएँ पहले की तुलना में अधिक पारदर्शी और समावेशी हुई हैं।

महिला सशक्तिकरण: पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक-तिहाई सीटें आरक्षित हैं, जिससे फरेंदा में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। अब महिलाएँ गाँव की बैठकों में सक्रिय रूप से भाग लेने लगी हैं और स्वास्थ्य, स्वच्छता, बच्चों की शिक्षा और पोषण जैसे मुद्दों पर अधिक ध्यान दे रही हैं। हालांकि कई जगहों पर अभी भी पुरुष परिजन उनके निर्णयों पर प्रभाव डालते हैं, लेकिन धीरे-धीरे महिलाएँ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही हैं और स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने की दिशा में आगे बढ़ रही हैं।

आजीविका और रोजगार सृजन: मनरेगा (MGNREGA) जैसी योजनाओं ने गाँव के गरीब परिवारों को रोजगार और आय का सहारा दिया है। इससे लोगों को मौसमी बेरोजगारी और पलायन से राहत मिली है। हालाँकि, कई बार मजदूरी मिलने में देरी और तकनीकी समस्याएँ भी सामने आती हैं। फिर भी, जब गाँव के लोग योजनाओं की निगरानी और सामाजिक लेखा-परीक्षण में भाग लेते हैं, तो पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ती है, जिससे योजनाओं का असर और बेहतर होता है।

शिक्षा और स्वास्थ्य: ग्राम पंचायतों ने स्थानीय स्तर पर विद्यालयों, आंगनवाड़ी केंद्रों और स्वास्थ्य उपकेंद्रों के संचालन में सहयोग दिया है। पंचायतों की निगरानी से बच्चों की स्कूल उपस्थिति, मध्याह्न भोजन योजना और टीकाकरण कार्यक्रम में सुधार हुआ है। फिर भी, शिक्षकों की अनुपस्थिति, इमारतों की कमी और संसाधनों की सीमाएँ जैसी दिक्कतें अब भी मौजूद हैं। पंचायतों की पहल से अब लोगों में शिक्षा, स्वच्छता और स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ रही है, जो ग्रामीण जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बना रही है।

जवाबदेही और पारदर्शिता: अध्ययन में यह पाया गया कि जब गाँवों में सहभागी नियोजन और सामाजिक लेखा-परीक्षण नियमित रूप से किए जाते हैं, तो भ्रष्टाचार कम होता है और परियोजनाओं में पारदर्शिता बढ़ती है। ग्राम सभा की नियमित बैठकें, खर्चों की सार्वजनिक जानकारी और लोगों की सीधी भागीदारी से पंचायतों पर जनता का भरोसा बढ़ा है। इससे विकास कार्यों की सफलता और स्थिरता दोनों में सुधार हुआ है।

8. चुनौतियाँ और बाधाएँ:

पंचायती राज व्यवस्था को ग्रामीण क्षेत्रों में विकेंद्रीकृत शासन और जनभागीदारी पर आधारित विकास के लिए एक मज़बूत प्रणाली के रूप में बनाया गया था। लेकिन इसके सुचारू संचालन में कई तरह की राजनीतिक, प्रशासनिक और सामाजिक कठिनाइयाँ सामने आती हैं। ये समस्याएँ गाँवों में लोकतंत्र की जड़ों को कमज़ोर करती हैं और समावेशी विकास में रुकावट पैदा करती हैं। प्रमुख चुनौतियाँ इस प्रकार हैं –

राजनीतिक हस्तक्षेप: कई पंचायतों में निर्णय लेने की प्रक्रिया पर स्थानीय नेताओं या प्रभावशाली व्यक्तियों का दबदबा होता है। वे अपनी राजनीतिक पकड़ के कारण पंचायतों में लिए जाने वाले फैसलों को अपने हित में मोड़ लेते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि

असली जनप्रतिनिधि और आम नागरिक निर्णय प्रक्रिया से बाहर रह जाते हैं। कई बार विकास योजनाएँ भी राजनीतिक लाभ के हिसाब से बनाई जाती हैं, जिससे गरीब और वंचित वर्गों की जरूरतें अनदेखी रह जाती हैं। इस तरह का राजनीतिक हस्तक्षेप पंचायतों की स्वायत्तता और निष्पक्षता को कमज़ोर करता है।

नौकरशाही का नियंत्रण: हालाँकि संविधान के 73वें संशोधन के ज़रिए पंचायतों को अधिक अधिकार और वित्तीय स्वायत्तता देने का प्रावधान किया गया था, लेकिन व्यवहार में अधिकांश निर्णय और धन संबंधी कामकाज पर नौकरशाही का नियंत्रण बना हुआ है। सरकारी प्रक्रियाएँ जटिल और समय लेने वाली होती हैं, जिससे योजनाओं के अनुमोदन और धन जारी करने में देरी होती है। इस कारण पंचायतें अपने स्तर पर स्वतंत्र रूप से निर्णय नहीं ले पातीं और उच्च अधिकारियों पर निर्भर रहती हैं। राज्य और ज़िला प्रशासन के दोहरे नियंत्रण से समन्वय की समस्या भी पैदा होती है।

क्षमता की कमी: कई निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के पास प्रशासन, वित्तीय प्रबंधन और योजना निर्माण का पर्याप्त अनुभव या प्रशिक्षण नहीं होता। इससे वे योजनाओं को सही ढंग से लागू नहीं कर पाते। पंचायत सचिव, लेखाकार या इंजीनियर जैसी तकनीकी सहायता की कमी भी एक बड़ी समस्या है। प्रशिक्षण और क्षमता विकास कार्यक्रमों की कमी के कारण पंचायतें अपनी योजनाओं को प्रभावी, पारदर्शी और दीर्घकालिक रूप से टिकाऊ बनाने में असमर्थ रहती हैं।

लैंगिक और जातिगत बाधाएँ: संविधान ने महिलाओं, अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST) के लिए आरक्षण की व्यवस्था की है, लेकिन सामाजिक भेदभाव और पारंपरिक सत्ता संरचना अभी भी बनी हुई है। कई बार महिला प्रतिनिधियों को निर्णय लेने की पूरी आज़ादी नहीं होती; उनके स्थान पर परिवार के पुरुष सदस्य ही फैसले लेते हैं, जिसे "प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व" कहा जाता है। इसी तरह, निचली जातियों के प्रतिनिधियों को भी कई बार भेदभाव या सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता है, जिससे पंचायत स्तर पर समान भागीदारी का उद्देश्य अधूरा रह जाता है।

वित्तीय निर्भरता: पंचायतों के पास स्वयं का राजस्व जुटाने के बहुत सीमित साधन होते हैं। वे मुख्य रूप से राज्य और केंद्र सरकार से मिलने वाले अनुदानों पर निर्भर रहती हैं। लेकिन ये अनुदान अक्सर देर से या कम राशि में मिलते हैं, जिससे विकास योजनाओं पर असर पड़ता है। धन की कमी के कारण पंचायतें स्थानीय ज़रूरतों के अनुसार योजनाएँ नहीं बना पातीं, और दीर्घकालिक विकास के बजाय केवल तत्कालिक कामों पर ध्यान देती हैं। इस प्रकार, आत्मनिर्भरता की भावना विकसित नहीं हो पाती और निर्भरता की प्रवृत्ति बढ़ती है।

पारदर्शिता और जवाबदेही की कमी: पंचायतों में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए सही रिकॉर्ड रखना, सूचना का सार्वजनिक रूप से खुलासा करना और सामाजिक लेखा-परीक्षण (Social Audit) जैसी व्यवस्थाएँ ज़रूरी हैं। लेकिन ज़्यादातर जगहों पर रिकॉर्ड रखने की प्रणाली कमज़ोर होती है और डिजिटल साक्षरता (Digital Literacy) का स्तर भी बहुत कम है। कई बार योजनाओं और खर्चों की जानकारी जनता तक नहीं पहुँचती। सामाजिक ऑडिट भी औपचारिक रूप से तो किए जाते हैं, लेकिन उनका पालन सही तरीके से नहीं होता। इससे भ्रष्टाचार, धन के दुरुपयोग और जवाबदेही की कमी जैसी समस्याएँ बढ़ जाती हैं।

9. नीतिगत सुझाव

आर्थिक स्वायत्तता को मजबूत करना:
पंचायतों को अपनी आय बढ़ाने के लिए स्थानीय स्तर पर टैक्स वसूली की व्यवस्था और सरकार से मिलने वाले अनुदानों में पारदर्शिता लाने की ज़रूरत है। इससे वे अपने विकास कार्यों को स्वतंत्र रूप से चला सकेंगी।
प्रतिनिधियों की क्षमता बढ़ाना:
चुने गए जनप्रतिनिधियों को शासन चलाने, डिजिटल तकनीकों का इस्तेमाल करने और योजनाओं के प्रबंधन पर नियमित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे अधिक प्रभावी ढंग से काम कर सकें।
डिजिटल शासन को बढ़ावा देना:
पंचायतों में ई-पंचायत जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग किया जाए, जिससे योजनाओं की निगरानी तुरंत हो सके और नागरिक अपनी राय या शिकायत सीधे दे सकें।
ग्राम सभा की भूमिका को सशक्त बनाना:
हर तीन महीने में ग्राम सभा की बैठक ज़रूर हो, जिसमें महिलाओं और वंचित वर्गों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाए ताकि

निर्णय सबकी सहमति से लिए जा सकें।

सामाजिक जवाबदेही सुनिश्चित करना:

पंचायतों के खर्च और कामकाज की सार्वजनिक जांच (जैसे सामाजिक लेखा परीक्षा) की व्यवस्था हो, जिससे पारदर्शिता और जनता का भरोसा बढ़े।

महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना:

महिला प्रतिनिधियों के लिए विशेष नेतृत्व प्रशिक्षण और मार्गदर्शन कार्यक्रम चलाए जाएँ ताकि वे आत्मविश्वास से निर्णय ले सकें और प्रशासन में प्रभावी भूमिका निभा सकें।

निष्कर्ष:

फरेंदा तहसील का अनुभव यह दिखाता है कि भारत में सहभागी शासन यानी लोगों की भागीदारी पर आधारित शासन प्रणाली में एक तरह का विरोधाभास है — जहाँ एक तरफ इसके संस्थागत ढाँचे (जैसे पंचायती राज व्यवस्था) मज़बूत हैं, लेकिन वास्तविक कामकाज के स्तर पर अभी भी कई कमज़ोरियाँ हैं। 73वें संविधान संशोधन के बाद पंचायती राज व्यवस्था ने स्थानीय स्तर पर लोकतंत्र को मजबूत किया है। इसने लोगों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल किया, जवाबदेही बढ़ाई और समाज के सभी वर्गों को जोड़ने की कोशिश की। फिर भी, इन अच्छे प्रावधानों को सही मायने में स्थानीय सशक्तिकरण में बदलने में कई व्यवहारिक और संरचनात्मक बाधाएँ हैं। आज भी वित्तीय संसाधनों का अभाव, प्रशासनिक स्वतंत्रता की कमी, और स्थानीय प्रतिनिधियों की क्षमता निर्माण (ट्रेनिंग) की कमी जैसे कारणों से पंचायती राज संस्थाएँ पूरी तरह सक्षम नहीं हो पाई हैं। कई जगहों पर नौकरशाही का प्रभाव, सामाजिक असमानताएँ, और अभिजात वर्ग का दबदबा भी ग्रामीण शासन में आम लोगों की भागीदारी को सीमित कर देते हैं। फरेंदा तहसील का अनुभव यह दिखाता है कि विकेन्द्रीकृत लोकतंत्र का सपना अभी भी इन समस्याओं से जूझ रहा है।

इसके बावजूद, पंचायती राज संस्थाएँ समावेशी ग्रामीण विकास का एक महत्वपूर्ण माध्यम बनी हुई हैं। अगर इन संस्थाओं में पारदर्शिता, सामुदायिक भागीदारी और समान संसाधन वितरण को मज़बूती से लागू किया जाए, तो यह स्थानीय लोगों की ज़रूरतों के अनुसार विकास की दिशा तय कर सकता है। इस तरह ग्रामीण विकास केवल सरकारी योजना नहीं रह जाता, बल्कि लोगों की सामूहिक भागीदारी और साझा ज़िम्मेदारी का परिणाम बन जाता है। फरेंदा का अनुभव यह सिखाता है कि स्थायी ग्रामीण विकास के लिए सिर्फ लोकतांत्रिक संस्थाओं का होना काफी नहीं है, बल्कि ज़रूरी है कि ये संस्थाएँ सक्रिय रूप से काम करें और नागरिक स्वयं परिवर्तन के भागीदार बनें। सच्चा सहभागी शासन तभी संभव है जब समुदायों को अपने विकास के निर्णय लेने और उन्हें लागू करने की स्वतंत्रता मिले। तभी गाँवों का लोकतंत्र वास्तव में जीवंत, समावेशी और परिवर्तनकारी बन सकेगा।

संदर्भ सूची:

Aiyar, Y. (2019). *Reclaiming the republic: The future of India's democracy.* HarperCollins.

Buch, N. (2009). *From oppression to assertion: A study of panchayats and women in Madhya Pradesh.* Centre for Women's Development Studies.

Chand, P. (2019). Gandhi and the idea of Gram Swaraj. *Indian Journal of Political Science, 80*(3), 401–418.

Crook, R. C., & Manor, J. (1998). *Democracy and decentralisation in South Asia and West Africa.* Cambridge University Press.

Government of India. (1992). *The Constitution (73rd Amendment) Act.* Ministry of Law and Justice.

Jha, S. (2018). *Women's political participation in local governance: A study of Panchayati Raj institutions in India.* Sage Publications.

Mathew, G. (1994). *Panchayati Raj: From legislation to movement.* Concept Publishing Company.

Mishra, R. (2020). Panchayati Raj and rural development in Uttar Pradesh: An analysis. *Indian Journal of Public Administration, 66*(2), 213–229.

Rondinelli, D. A. (1983). *Development projects as policy experiments: An adaptive approach to development administration.* Methuen.

Singh, R. (2015). *Grassroots governance and Panchayati Raj institutions in India.* Rawat Publications.

Vyasulu, V. (2000). *Decentralised governance and planning in India.* Concept Publishing Company.

World Bank. (2013). *Enhancing participatory governance in South Asia: A review of experiences.* World Bank.